



# INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

## प्रसाद की नाट्यालोचना दृष्टि

शोधार्थी

बरखा लोहिया

पी एच डी (। हिन्दी विभाग)

दिल्ली विश्वविद्यालय

नई दिल्ली ११००७६

बीज शब्द:- नाटक , रंगमंच, आलोचना, इतिहास, संस्कृति, परंपरा

शोध सार:- 'जयशंकर प्रसाद' हिन्दी साहित्य का एक ऐसा व्यक्तित्व है जिससे कोई विरला हिन्दी पाठक ही अपरिचित होगा। प्रसाद ने हिन्दी साहित्य की गद्य और पद्य दोनों विधाओं में लेखनी चलाई। वे कवि, उपन्यासकार, कहानीकार और नाटककार के रूप में प्रसिद्ध रहे। सबसे अधिक ख्याति उन्हें कवि और नाटककार के रूप में मिली। प्रसाद ने जिस प्रकार नाटकों का विषय भारतीय संस्कृति, इतिहास, परंपरा, राष्ट्रीयता और देश प्रेम की भावना को बनाया शायद ही हिन्दी के किसी अन्य लेखक ने भारतीय संस्कृति, परंपरा, समृद्धि, शक्ति और औदात्य का ऐसा भास्वर प्रस्तुत किया। " प्रसाद ने भारतीय साहित्य के गौरवपूर्ण युगों को अपने नाटकों का आधार बनाया है, उन्होंने वैदिक काल से लेकर गुप्तकाल और मौर्यकाल तक ही अपने को परिसीमित रखा"।<sup>1</sup> प्रसाद ने जिस समय हिन्दी साहित्य लेखन में कदम रखा उस समय हिन्दी साहित्य पर पारसी, अंग्रेज़ी, संस्कृत और बांग्ला भाषा के साहित्य और रंगमंच का प्रभाव था। 1861 ईसवी का राजा लक्ष्मण सिंह ने संस्कृत से 'शकुंतला' का अनुवाद किया। 'मालती माधव' का अनुवाद लाला सीताराम द्वारा किया गया। शेक्सपियर के नाटक 'मर्चेट ऑफ़ वेनिस' का अनुवाद स्वयं भारतेन्दु द्वारा किया गया तथा रतनचंद्र द्वार 'कॉमेडी ऑफ़ एरर' का अनुवाद ब्रह्मजालक नाम से किया गया।" प्रसाद के नाट्यरचना काल के समय उन्हें केवल पारसी थिएटर ही सामने दिखाई दिया जिसकी 'फूहड़' 'भड़ैत' से उनकी श्रेष्ठ एवं परिष्कृत थिएटर साहित्यिक अभिरुचि का कोई तालमेल नहीं बैठता था"।<sup>2</sup> प्रसाद को यह पाश्चात्य रंगमंच परंपरा व अनुवाद रास नहीं आया तथा उन्होंने स्वयं हिन्दी रंगमंच कि लिए कार्य करना प्रारंभ किया और हिन्दी साहित्य रंगमंच को मौलिकता प्रदान की।

मूल आलेख :-

भरतमुनि के अनुसार:-

“ न तज्ज्ञानम न तच्छिलपम न सा विद्या न सा कला।

न सौ यौगो न तत्कर्म नाट्येसमिन यन्न दृश्यते॥

अर्थात् लौकिक, व्यावहारिक जीवन का सामाजिक, धार्मिक कोई भी ऐसा ज्ञान नहीं है जो नाटक से संप्रेषित ना होता हो क्योंकि नाटक सार्ववर्णिक कला माना गया है। नाट्य सृजन के आवश्यक होता है कि सभी वर्णों के लोगों को उपयुक्त ज्ञान दिया जा सके तथा उसे रंजित किया जा सके। “नाटक एक त्रिआयात्मक विधा है जिसमें नाट्यकृति, प्रस्तुतीकरण एवं सामाजिक (प्रेक्षक) तीनों का समन्वय नाटकीय स्वतंत्रता के लिए अपेक्षित है”<sup>13</sup> प्रसाद ने हिन्दी नाटकों को नया आयाम दिया। नई भाषा, शैली, अभिनय और पात्रों को नये विचारों से प्रस्तुत किया। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की ये काव्य पंक्तियाँ प्रसाद पर बिलकुल सटीक बैठती हैं:-

“लीक पर वे चलें जिनके

चरण दुर्बल और हारें हैं,

हमें तो जो हमारी यात्रा से बने

ऐसे अनिर्मित पंथ प्यारे हैं।

प्रसाद ने नाटकों की रचना के साथ - साथ नाटक विधा या रंगमंचीय प्रस्तुति संबंधी विचार भी प्रस्तुत किये जिससे हमें उनके नाट्य साहित्य संबंधी विचारों को समझने में मदद मिलती है जो इस प्रकार है-

प्रसाद की मान्यता थी कि नाटककार को भारतीय नाट्य परंपरा तथा पाश्चात्य नाट्य परंपरा दोनों को अपनी रंगमंचीय अभिव्यक्ति के लिए समन्वय करना चाहिए। “प्रसाद ने न तो प्राचीन भारतीय नाट्यशास्त्र से अपने को अलग किया और न ही पाश्चात्य नाट्य विधियों का अंधानुकरण किया, दोनों का उचित सामंजस्य उनकी नाट्यकला की प्रमुख विशेषता रही”<sup>14</sup> भारतीय नाट्य परंपरा के नंदी पाठ, पूर्व रंग, प्रस्तावना व पाश्चात्य परंपरा के अंतर्द्वंद व बहिर्द्वंद तत्वों का सामंजस्य उन्होंने बखूबी प्रस्तुत किया पर उनका मान्यता की थी पाश्चात्य नाट्य परंपरा का अनुसरण केवल अनुकरण मात्र होना चाहिए नाटककार को इसका अंधानुकरण करने की आवश्यकता नहीं है। “प्रसाद के नाटकों पर पाश्चात्य नाटक कला के प्रभाव की बात बहुत पहले स्वीकार कर ली गई थी। विद्वानों ने ऐसा अनुभव किया था कि प्रसाद ने बांग्ला के प्रसिद्ध नाटककार द्विजेंद्रलाल राय की कृतियों से प्रेरणा ली थी। राय महोदय अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध नाटककार शेक्सपियर से प्रभावित थे। इस प्रकार प्रसाद भी परोक्षतः शेक्सपियर की स्वच्छन्दतावादी शैली से प्रभावित थे।<sup>15</sup>

“रंगमंच की सीमाओं और संसाधनों से बाधित होकर नाट्य लेखन करने को प्रसाद समीचीन नहीं समझते थे। उनके अनुसार ऐसे नाटक सौंदर्य के नये क्षितिज प्रकाशित नहीं होंगे”<sup>16</sup> वे मानते थे कि वर्तमान में उपलब्ध जो वैज्ञानिक तकनीकी साधन है नाटककार को उनका उपयोग रंगमंच को प्रभावी बनाने कि उद्देश्य से करना चाहिए । वे प्रकाश व्यवस्था , ध्वनि प्रभाव और दृश्य को दिखाने हेतु कई वैज्ञानिक उपकरणों का इस्तेमाल भी करते थे।

हिन्दी रंगमंच के निरंतर विकास के लिए उन्होंने प्रगति और परंपरा दोनों का समन्वय आवश्यक माना ।” नाट्य शिल्प, संवेदना और रंग प्रदर्शन की शैली और साधनों आदि सभी दृष्टियों से प्रगति और परंपरा का समन्वय आवश्यक होता है”<sup>17</sup> प्रसाद ने हिन्दी रंगमंच के पूर्ण विकास के लिए परंपरा से चली आ रही नाट्यधर्मी और लोकधर्मी नाट्य शैलियों का अनुसरण किया। नाट्य लेखन की भाषा पर प्रसाद ने अपने मत प्रस्तुत किए । उनका मानना था कि नाटकों की भाषा सृजनात्मक होनी चाहिए वे अन्य विद्वानों कि इस मत से बिलकुल भी सहमत नहीं थी कि पात्रों की भाषा उनकी स्वाभिकता के अनुरूप होनी चाहिए। उनके अनुसार भाषा की साहित्यिक गरिमा होनी भी आवश्यक है , भाषा की स्वतंत्रता नष्ट करके कई तरह की खिचड़ी भाषाओं का प्रयोग हिन्दी नाटकों के लिए स्वीकार्य नहीं होता। “ हिन्दी नाटक में प्रसाद के आने से गुणात्मक परिवर्तन होता है। सीधी -सपाट भाषा की तुलना लाक्षणिक और अधिक अर्थ -संपन्न भाषा का प्रयोग होने लगता है”<sup>18</sup>

नया सृजन में प्रसाद ने रस को अधिक महत्व दिया। उनके अनुसार” जैसे विश्व के भीतर से विश्वात्मा की अभिव्यक्ति होती है उसी तरह नाटकों में रस की “<sup>9</sup> प्रसाद अपने रस संबंधी विचार कि लिये अभिनवगुप्त से प्रेरित थे। पाश्चात्य साहित्य में प्रचलित व्यक्ति- वैचित्र्यवाद के स्थान पर प्रसाद ने भारतीय रस दृष्टि की प्रतिष्ठा की। प्रसाद ने हिन्दी रंगमंच में अभिनेत्रियों का अभाव पाया और उनके अनुसार यही हिन्दी रंगमंच के पिछड़ने का कारण भी रहा। अभिनेत्रियों का अभाव रंगमंच को प्रभावहीन और निर्जीव बना देता है। वे अभिनेत्रियों के साथ - साथ कुशल अभिनेता व निर्देशकों के अभाव को भी समझ रहे थे।

निष्कर्ष:- प्रसाद के अनुसार “यह भारी भ्रम है कि रंगमंच नाटक के लिए लिखे जाये। प्रयत्न तो क्या होना चाहिए कि नाटक के लिए रंगमंच हो, जो व्यावहारिक है”<sup>10</sup> अतः हम यह कह सकते हैं कि हिन्दी रंगपरंपरा को नया आयाम देने में प्रसाद की भूमिका अतुलनीय रही उन्होंने हिन्दी साहित्य को नया स्वरूप प्रदान किया। पारसी, अंग्रेज़ी, बांग्ला भाषा और रंगमंच के प्रभाव को कम कर हिन्दी रंगमंच को भारतीय नाट्य परंपरा से जोड़ा।

संदर्भ ग्रंथ:-

- 1 प्रो० केसरी कुमार, प्रसाद और उनके नाटक ,बिहार प्रकाशन समिति, आरा पटना पृ सं-136
- 2 रीतारानी पालीवाल,रंगमंच नया परिदृश्य, वाणी प्रकाशन,दिल्ली02,पृ सं-222
- 3 वही पृ सं-11
- 4 डॉ०रामचंद्र तिवारी,हिन्दी का गद्य साहित्य,विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी,उ०प्र०01
- 5 वही पृ सं-766
  
- 6 डॉ० शशि सरदाना एवं मांधाता ओझा, नाट्य चिंतन और रंग प्रयोग, कला मंदिर , नई सड़क दिल्ली06 पृ सं०186
- 7 वही पृ सं०188
- 8 रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज 01 पृ सं०150
- 9 जयशंकर प्रसाद , काव्य और कला तथा अन्य निबंध,डायमंड पॉकेट बुक, दिल्ली 20 पृ सं०53
- 10 वही पृ सं०71